

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 77 — शाल्व का वध

5 October 2026



गरुडध्वज के नीचे अपने रथ पर खड़े प्रभु प्रलयकालीन सूर्य-सा दीप्त चक्र उठाते हैं, और द्वारका के जल के ऊपर मायावी राजा शाल्व के छल का दीर्घ राज्य समाप्त हो जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस सतहत्तरवें अध्याय में प्रद्युम्न पुनः रणभूमि में लौटते हैं, श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ से लौटकर द्वारका को घिरा हुआ पाते हैं, और सौभ का स्वामी मायावी शाल्व प्रभु के सम्मुख आता है — पहले शस्त्रों से, फिर वसुदेवजी की मायामयी प्रतिमूर्ति से। शुकदेवजी बीच में रुककर परीक्षित को बताते हैं कि श्रीकृष्ण वास्तव में कौन हैं, और तब सुदर्शन चक्र सूर्य की भाँति उदित होता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)

- अध्याय: 77 (सप्तसप्ततितम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा शाल्व का वध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: द्वारका का तट और समुद्र, शाल्व के आकाशचारी नगर सौभ के नीचे
- केंद्रीय विषय: द्युमान् पर प्रद्युम्न की विजय; श्रीकृष्ण का द्वारका लौटना और शाल्व से द्वन्द्व; वसुदेव-वध की माया; शुकदेवजी की शिक्षा कि मोह प्रभु को छू नहीं सकता; सौभ का विनाश और शाल्व का वध
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 1-37
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, द्वितीय भाग)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

छिहत्तरवें अध्याय में यदुवंश को मिटा देने की प्रतिज्ञा करने वाला शाल्व, भगवान् शिव से प्राप्त आकाशचारी नगर सौभ पर चढ़कर द्वारका पर टूट पड़ा। प्रद्युम्न ने रक्षा का नेतृत्व किया, किन्तु शाल्व के मन्त्री द्युमान् ने गदा से उन्हें मूर्च्छित कर दिया, और युद्धधर्म का पालन करते हुए सारथि उन्हें रणभूमि से हटा ले गए — जिस पर जागने पर प्रद्युम्न को गहरी लज्जा हुई।

प्रद्युम्न पुनः द्युमान् की ओर

प्रद्युम्न ने अपने सारथि से अधिक वाद-विवाद नहीं किया। उन्होंने आचमन किया, कवच बाँधा, धनुष उठाया और केवल इतना कहा, “मुझे वीर द्युमान् के पास ले चलो।” द्युमान् उस समय यादव-सेना को छिन्न-भिन्न कर रहा था। प्रद्युम्न ने उसके आक्रमण को रोका और मुस्कराते हुए लोहे के आठ बाण छोड़े — चार घोड़ों के लिए, एक सारथि के लिए, एक-एक धनुष और ध्वजा के लिए, और अन्तिम द्युमान् के सिर के लिए। इधर गद, सात्यकि, साम्ब और अन्य वीर शाल्व की सेना को काटते गए, और सौभ के सैनिक एक-एक कर समुद्र में गिरते गए। यों दोनों सेनाएँ परस्पर प्रहार करती रहीं, और वह भयंकर युद्ध सत्ताईस दिन-रात अविराम चला।

इन्द्रप्रस्थ से श्रीकृष्ण का शीघ्र प्रत्यागमन

इस पूरे समय श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ में थे, जहाँ युधिष्ठिर ने उन्हें राजसूय यज्ञ में आमन्त्रित किया था। यज्ञ पूर्ण होने और शिशुपाल के मारे जाने पर प्रभु ने कुरुवृद्धों, मुनियों, कुन्ती और पाण्डवों से विदा ली और द्वारका की ओर चल पड़े; मार्ग में उन्होंने अत्यन्त भयावह अपशकुन देखे। उन्होंने मन ही मन कहा: “मैं अपने बड़े भाई के साथ यहाँ चला आया हूँ। निश्चय ही शिशुपाल के पक्ष के राजा मेरी नगरी पर आक्रमण कर रहे हैं।” द्वारका पहुँचकर उन्होंने अपने जनों पर हुए संहार को देखा। नगर की रक्षा का भार उन्होंने बलरामजी को सौंपा और शाल्व तथा उसके तैरते दुर्ग को देखकर अपने सारथि दारुक से बोले।

रथं प्रापय मे सूत शाल्वस्यान्तिकमाशु वै ।

सम्भ्रमस्ते न कर्तव्यो मायावी सौभराडयम् ॥ १० ॥

*ratham prāpaya me sūta śālvasyāntikam āśu vai sambhramas te na kartavyo māyāvī saubha-
rāḍ ayam*

अर्थ: “सारथि, मेरा रथ शीघ्र शाल्व के पास ले चलो। तुम्हें घबराना नहीं है — यह सौभपति मायावी है।” (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 10)



भयावह अपशकुन देखकर इन्द्रप्रस्थ से लौटे श्रीकृष्ण द्वारका को घिरा पाते हैं; वे नगर-रक्षा बलरामजी को सौंपते हैं और दारुक को सीधे शाल्व की ओर रथ ले चलने की आज्ञा देते हैं, मायावी से न घबराने को कहते हुए (श्लोक 6-10)।

दारुक रथ पर चढ़े और उसे हाँक ले चले; रथ के रणभूमि में प्रवेश करते ही अपने और पराए, सबने ध्वजा पर फहराते गरुड़-चिह्न से प्रभु को पहचान लिया।

शाल्व के साथ द्वन्द्व

शाल्व की सेना तब तक लगभग नष्ट हो चुकी थी। श्रीकृष्ण को देखते ही उसने दारुक पर भयंकर गर्जना करती शक्ति फेंकी; वह महान् उल्का की भाँति दिशाओं को प्रकाशित करती आकाश को चीरती आई। प्रभु ने अपने बाणों से उसके सौ टुकड़े कर दिए, फिर शाल्व को सोलह बाणों से बीँधा और आकाश में चक्कर काटते सौभ को बाणों की वर्षा से वैसे ही भर दिया जैसे सूर्य अपनी किरणों से आकाश को भर देता है। तब शाल्व ने प्रभु की बार्यीं भुजा पर प्रहार किया और शार्ङ्ग धनुष उनके हाथ से छूट गया। आकाश और पृथ्वी से देखने वाले सब प्राणी उस अद्भुत कृत्य पर विस्मय और भय से हाहाकार कर उठे।



शाल्व की गर्जती शक्ति उल्का की भाँति दारुक पर गिरती है; प्रभु उसके सौ टुकड़े कर देते हैं और चक्कर काटते सौभ को बाणों से वैसे भर देते हैं जैसे सूर्य आकाश को किरणों से (श्लोक 12-14)।

उत्साहित होकर सौभपति ने गरजते हुए ताना मारा। “मूर्ख! हमारी आँखों के सामने तूने हमारे मित्र और भाई शिशुपाल की वधू का हरण किया, और फिर सभा के बीच असावधान अवस्था में उसे मार डाला। तू स्वयं को अजेय समझता है। आज मेरे सामने खड़ा रह, तो मैं अपने तीखे बाणों से तुझे वहाँ भेज दूँगा जहाँ से कोई लौटकर नहीं आता।”

श्रीभगवानुवाच

वृथा त्वं कथसे मन्द न पश्यस्यन्तिकेऽन्तकम् ।

पौरुषं दर्शयन्ति स्म शूरा न बहुभाषिणः ॥ १९ ॥

śrī-bhagavān uvāca vṛthā tvam katthase manda na paśyasy antike 'ntakam pauruṣaṁ darśayanti sma śūrā na bahu-bhāṣiṇaḥ

अर्थ: श्रीभगवान् ने कहा: “मन्दबुद्धि! तू व्यर्थ डींग मारता है, अपने निकट खड़े काल को नहीं देखता। शूरवीर अपना पौरुष दिखाते हैं; वे बहुत बोलने वाले नहीं होते।” (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 19)

इतना कहकर क्रुद्ध प्रभु ने भीषण वेग से अपनी गदा शाल्व की हँसली पर दे मारी। मायावी काँप उठा और रक्त वमन करने लगा, और ज्यों ही गदा प्रभु के हाथ में लौटी, वह दृष्टि से ओझल हो गया।

सबसे क्रूर माया

क्षण भर बाद एक पुरुष रणभूमि पर चलता हुआ आया। उसने श्रीकृष्ण के आगे सिर झुकाया और रोते हुए कहा कि उसे देवकीजी ने भेजा है: “कृष्ण, कृष्ण, महाबाहु, माता-पिता के प्रति इतने वत्सल — शाल्व आपके पिता को बाँधकर वैसे ही घसीट ले गया है जैसे कसाई पशु को वधस्थल तक घसीटता है।” यह अप्रिय समाचार सुनकर मनुष्य-स्वभाव धारण किए हुए प्रभु मन में व्याकुल हुए; करुणा और स्नेहवश वे

साधारण मनुष्य की भाँति बोल उठे।

कथं राममसम्भ्रान्तं जित्वाजेयं सुरासुरैः ।

शाल्वेनाल्पीयसा नीतः पिता मे बलवान् विधिः ॥ २४ ॥

katham rāmam asambhrāntaṁ jītvājeyaṁ surāsuraiḥ śālvenālpīyasā nītaḥ pitā me balavān vidhiḥ

अर्थ: “कभी विचलित न होने वाले, देवताओं और असुरों से भी अजेय बलराम को तुच्छ शाल्व ने कैसे जीत लिया और मेरे पिता को हर ले गया? सचमुच विधाता बलवान् है।” (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 24)

गोविन्द यह कह ही रहे थे कि शाल्व वसुदेवजी-सदृश एक आकृति को लिए उनके सामने प्रकट हुआ और व्यंग्य से बोला: “यह रहा तुझे जन्म देने वाला तेरा पिता, जिसके लिए तू जीता है! तेरे देखते-देखते मैं इसे मार डालूँगा। बचा सके तो बचा ले, मूर्ख।” यह धमकी देकर मायावी ने तलवार से उस आकृति का सिर काटता-सा प्रतीत हुआ और उसे लेकर निकट ही आकाश में टिके सौभ में जा चढ़ा।

एक क्षण के लिए महानुभाव प्रभु, जिनका ज्ञान उनके अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित है, स्वजनों के प्रति अनुराग के कारण स्वाभाविक भाव से विह्वल-से दिखे। फिर उन्होंने उस आसुरी माया को पहचान लिया — वह विद्या जो मय दानव ने सिखाई थी और जिसे शाल्व ने उनके सामने फैलाया था।

न तत्र दूतं न पितुः कलेवरं

प्रबुद्ध आजौ समपश्यदच्युतः ।

स्वाप्नं यथा चाम्बरचारिणं रिपुं

सौभस्थमालोक्य निहन्तुमुद्यतः ॥ २९ ॥

na tatra dūtaṁ na pituḥ kalevaraṁ prabuddha ājau samapaśyad acyutaḥ svāpnaṁ yathā cāmbara-cāriṇaṁ ripuṁ saubha-stham ālokya nihantum udyataḥ

अर्थ: पूर्ण रूप से सजग अच्युत को रणभूमि में न वह दूत मिला, न पिता का शरीर — वे स्वप्न में देखी आकृतियों जैसे थे; और सौभ पर आकाश में विचरते शत्रु को देखकर वे उसका वध करने को उद्यत हुए। (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 29)



प्रभु के जागी आँखों से देखते ही रोता दूत और वसुदेव-सदृश आकृति स्वप्न की आकृतियों की भाँति विलीन हो जाते हैं; मय से सीखी शाल्व की आसुरी माया कुछ भी नहीं छू पाती (श्लोक 28-29)।

शुकदेवजी प्रभु के विषय में स्पष्ट कहते हैं

यहाँ शुकदेवजी युद्ध से हटकर परीक्षित की ओर मुड़ते हैं और ऐसे वचन कहते हैं जो समूची कथा को स्थिर कर देते हैं। कुछ ऋषि, वे कहते हैं, कथा को इसी रूप में कहते हैं — कि श्रीकृष्ण शोकग्रस्त हुए — किन्तु वे विचारपूर्वक नहीं कहते; वे भूल जाते हैं कि ऐसा कथन उनके ही अन्यत्र कहे वचनों का विरोध करता है।

क्व शोकमोहौ स्नेहो वा भयं वा येऽज्ञसम्भवाः ।

क्व चाखण्डितविज्ञानज्ञानैश्वर्यस्त्वखण्डितः ॥ ३१ ॥

kva śoka-mohau sneho vā bhayaṁ vā ye 'jñā-sambhavāḥ kva cākhaṇḍita-vijñāna-jñānaiśvaryas tv akhaṇḍitaḥ

अर्थ: कहाँ शोक, मोह, स्नेह या भय, जो अज्ञान से उत्पन्न होते हैं — और कहाँ वे अखण्डित प्रभु, जिनके विज्ञान, ज्ञान और ऐश्वर्य कभी खण्डित नहीं होते? (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 31)

यत्पादसेवोर्जितयात्मविद्यया

हिन्वन्त्यनाद्यात्मविपर्ययग्रहम् ।

लभन्त आत्मीयमनन्तमैश्वरं

कुतो नु मोहः परमस्य सद्गतेः ॥ ३२ ॥

*yat-pāda-sevorjitayātma-vidyayā hinvanty anādyātma-viparyaya-graham labhanta ātmīyam
anantam aiśvaram kuto nu mohah paramasya sad-gateḥ*

अर्थ: उनके चरणों की सेवा से पुष्ट आत्मविद्या द्वारा सन्तजन देह को आत्मा मानने के अनादि भ्रम को त्याग देते हैं और अपना अनन्त ईश्वरीय ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं। तब सत्पुरुषों की गति उन परमेश्वर को मोह कैसे छू सकता है? (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 32)

यही इस अध्याय का हृदय है, और कोई वैष्णव आचार्य यहीं ठहरेगा। प्रभु ने स्वयं को व्यथित दिखने ही क्यों दिया? क्योंकि लीला के लिए उन्होंने मनुष्य-स्वभाव धारण किया था, और उसी में वे दिखाते हैं कि एक प्रेमी पुत्र क्या अनुभव करता है — फिर भी शुकदेवजी हमें लीला को लीलाधारी समझने की भूल नहीं करने देते। शाल्व की माया ने एक पिता का शरीर और उसकी मृत्यु रच दी; प्रभु के जागने ने उसे स्वप्न सिद्ध कर दिया। एक ही दृश्य में यह समूची माया का स्वरूप है: वह हमें वहाँ हानि दिखाती है जहाँ कुछ भी खोया नहीं, और जागी हुई आँखों से देखते ही विलीन हो जाती है। सन्तजन वे आँखें उनके चरणों की सेवा से पाते हैं; जिनके चरण सेवित हैं, वे स्वयं अन्धकार में नहीं हो सकते। हमारा शोक, हमारा भय और हमारी आसक्ति हमारे अज्ञान का माप हैं, और जो सेवा सन्तों को मुक्त करती है, वही हमें भी मुक्त करती है।

सौभ और शाल्व का पतन

अब शाल्व ने शस्त्रों की झड़ी से प्रभु पर आक्रमण किया, किन्तु अमोघ पराक्रमी श्रीकृष्ण ने उसे बाणों से बाँधकर उसका कवच, धनुष और शिरोमणि तोड़ डाले और गदा से सौभ को चूर कर दिया। उस प्रहार से चूर्ण हुआ आकाशचारी नगर सहस्र खण्डों में टूटकर समुद्र में जा गिरा। शाल्व उसे छोड़कर भूमि पर खड़ा हुआ और गदा उठाए श्रीकृष्ण की ओर दौड़ा; प्रभु ने भल्ल से उसकी गदाधारी भुजा काट दी। तब शाल्व का अन्त करने के लिए उन्होंने प्रलयकालीन सूर्य-सा तेजस्वी अपना अद्भुत चक्र उठाया, और उसे धारण किए वे उदित सूर्य से मण्डित उदयाचल की भाँति शोभित हुए। उसी चक्र से श्रीहरि ने उस महामायावी का कुण्डल और किरीट सहित सिर उसी प्रकार काट गिराया जैसे इन्द्र ने वज्र से वृत्र का सिर काटा था; और शाल्व के लोगों में हाहाकार मच गया।

तस्मिन् निपतिते पापे सौभे च गदया हते ।

नेदुर्दुन्दुभयो राजन् दिवि देवगणेऱिताः ।

सखीनामपचितिं कुर्वन् दन्तवक्रो रुषाभ्यगात् ॥ ३७ ॥

*tasmin nipatite pāpe saubhe ca gadayā hate nedur dundubhaya rājan divi deva-gaṇeritāḥ
sakhinām apacitiṁ kurvan dantavakro ruṣābhyagāt*

अर्थ: हे राजन्, जब वह पापी गिर पड़ा और सौभ गदा से नष्ट हो गया, तब स्वर्ग में देवगणों की दुन्दुभियाँ बज उठीं। तभी अपने मित्रों का बदला लेने को दन्तवक्र क्रोध में भरकर दौड़ा आया। (स्कन्ध 10, अध्याय 77, श्लोक 37)



प्रभु की गदा से चूर्ण होकर सौभ सहस्र खण्डों में टूटकर समुद्र में डूब जाता है; शाल्व के गिरने पर देवता स्वर्ग में दुन्दुभियों बजाते हैं (श्लोक 33-37)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. वीर बिना विलम्ब अपने कर्तव्य पर लौटता है। रणभूमि छोड़ने से लज्जित प्रद्युम्न पछतावे में नहीं डूबते; वे शुद्ध होकर, शस्त्र धारण कर सीधे युमान् के पास लौटते हैं। भक्ति की परीक्षा भी इसी में है कि गिरने के बाद हम कितनी शीघ्रता से लौटते हैं।
2. प्रभु की सेवा में घबराहट का कोई स्थान नहीं। दारुक से श्रीकृष्ण का पहला वचन (श्लोक 10) यही है कि उसे घबराना नहीं है, यद्यपि शत्रु मायावी है। जो सेवक प्रभु के साथ रथ पर है, उसे किसी माया का भय नहीं।
3. पराक्रम कर्म से बोलता है। शाल्व को प्रभु का उत्तर (श्लोक 19) हर साधक के जीवन का नियम है: सच्चे बलवान् अपने बल का बखान नहीं करते; वे कर्म करते हैं।
4. प्रभु का शोक उनकी लीला है, उनका बन्धन नहीं। पिता के लिए श्रीकृष्ण का विलाप (श्लोक 24), शुकदेवजी के अनुसार, उनके धारण किए मनुष्य-स्वभाव में कहा गया है। वे हमारे आँसू बाँटते हैं ताकि हम उनकी मुक्ति में भागी हो सकें।
5. शोक, मोह, स्नेह और भय केवल अज्ञान से जन्मते हैं। श्लोक 31 इन चारों के नाम लेकर उन्हें वहीं रखता है जहाँ उनका स्थान है — अजागृत में — कभी उनमें नहीं जिनके ज्ञान और ऐश्वर्य अखण्ड हैं।
6. चरण-सेवा अनादि मोह की औषधि है। श्लोक 32 सिद्धान्त भी है और आश्वासन भी: जो उनके चरणों की सेवा करते हैं, वे देह को आत्मा मानने की युग-पुरानी भूल त्याग देते हैं और ऐसा ऐश्वर्य पाते हैं जो उनका अपना है।

एक भक्तिमय चिन्तन

शाल्व के सारे शस्त्रों में जो प्रभु के सबसे निकट पहुँचा, वह शक्ति या गदा नहीं, एक झूठ था — एक रोता हुआ दूत, एक परिचित मुख, एक मृत्यु जो कभी हुई ही नहीं। उस क्षण में अपना जीवन पहचानना हमें गम्भीर कर देता है। कितनी बार हम उससे नहीं टूटते जो सच है, बल्कि उससे जो हमें दिखाया जाता है: समाचार का वेश पहने कोई भय, कल्पित कोई हानि, कोई वियोग जो केवल मन के रंगमंच पर है? श्रीकृष्ण उस

माया को एक धड़कन भर खेलने देते हैं, फिर बस देखते हैं, और वहाँ कुछ नहीं होता। यह देखना प्रभु का कोई करतब नहीं; यह उनका स्वरूप है। हमारे लिए यह एक अभ्यास है। जब-जब शोक, भ्रम, आसक्ति या आशंका उठे, हम पूछ सकते हैं कि इसे किसकी माया ने रचा है, और दृष्टि उनके चरणों की ओर मोड़ सकते हैं जो कभी छले नहीं गए। हमें केवल वैसे देखना है जैसे उन्होंने देखा, और पाना है कि दूत जा चुका है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब कोई भय या दुःख घर से आए दूत जैसे विश्वास के साथ सामने खड़ा हो, तो उस पर विश्वास करने से पहले ठहरें। श्वास लें और मौन में उसे सन्तों के शब्दों के साथ श्रीकृष्ण के चरणों में रख दें: “कहाँ अज्ञान से जन्मे शोक और भय — और कहाँ वे?” फिर इस अध्याय के इकतीसवें और बत्तीसवें श्लोक को स्मरण करें और कुछ क्षण उनकी स्थिरता में विश्राम पाएँ। अन्त में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

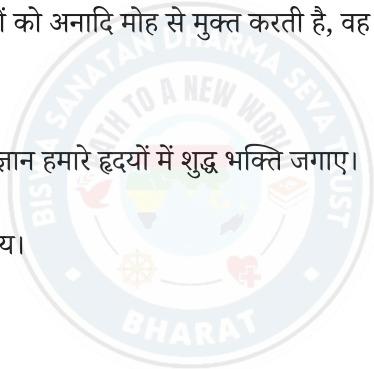
उपसंहार

दशम स्कन्ध का सतहत्तरवाँ अध्याय सौभ के युद्ध को समाप्ति तक ले आता है। प्रद्युम्न अपने पलायन का प्रायश्चित्त करते हैं, प्रभु नगरी की रक्षा के लिए लौटते हैं, और शाल्व का हर शस्त्र — शक्ति, बाण, गदा और अन्त में माया — उन पर टूटकर बिखर जाता है, जब तक सुदर्शन चक्र उस मायावी का अन्त नहीं कर देता। किन्तु अध्याय का स्थायी उपहार शुकदेवजी का शान्त सुधार है: जो प्रभु रोते-से दिखे, वे कभी बँधे न थे, और जो चरण-सेवा सन्तों को अनादि मोह से मुक्त करती है, वह हम सबके लिए खुली है। जब भी माया बुरा समाचार लेकर आए, हम इस सत्य को थामे रहें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, द्वितीय भाग), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), अध्याय 77।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-77-lord-krishna-slays-the-demon-shalva-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

